'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में वर्णित परिस्थितियों पर प्रकाश डालिए।

(K.U.K. 2014)

उत्तर—नाटक में रंगमंच की वस्तु होने के कारण देशकाल एवं वातावरण का विशेष महत्त्व होता है। नाटक में देशकाल एवं वातावरण का निर्माण तीन प्रकार से किया जाता है।

1. पात्रों की वेश-भूषा के द्वारा
2. पात्रों की भाषा के द्वारा
3. तत्कालीन अवस्था के चित्रण द्वारा ।

नाटककार को इन तीनों बातों का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। उसे यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि पात्रों की वेश-भूषा देशकाल वातावरण के अनुरूप हो। पात्रों की भाषा के सम्बन्ध में भी उसे जागरूक रहना पड़ता है क्योंकि पात्रों की भाषा यदि देशकाल के अनुरूप न होगी तो पात्र अस्वाभाविक प्रतीत होंगे। नाटककार नाटक के पात्रों द्वारा तत्कालीन अवस्था का चित्रण भी सफलतापूर्वक कर सकता है । नाटककार इसके माध्यम से वर्तमान में रहता हुआ भी भूतकाल का उद्घाटन करता है।

ऐतिहासिक नाटककार को तो इन बातों का और भी अधिक ध्यान रखना पड़ता है। यदि वह इतिहास की घटनाओं का सजीव चित्रण न कर सके तो नाटक सफल नहीं होगा। साथ ही उसे इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि नाटक देखते समय अथवा पढ़ते समय दर्शक या पाठक को यह न लगे कि वह इतिहास देख या पढ़ रहा है। नाटककार को विद्वानों के इस कथन का ध्यान रखना पड़ता है कि —'' इतिहास में तिथियों के अतिरिक्त और कुछ सत्य नहीं होता और साहित्य में तिथियों के अतिरिक्त शेष सब सत्य होता है।''

काल निरूपण—'ध्रुवस्वामिनी' की कथा का आधार ऐतिहासिक है। इसमें जिन ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख किया गया है, उनके सम्बन्ध में न तो प्रसाद जी ने स्वयं कोई ऐतिहासिक काल योजना निर्धारित की है और न ही इतिहासकार ही किसी निर्णय पर

पहुँच सके हैं। प्रसाद जी ने केवल श्री जायसवाल द्वारा मान्य एक तिथि का उल्लेख किया है जिसका सम्बन्ध चन्द्रगुप्त और शकराज के युद्ध से सम्बद्ध है। प्रसिद्ध इतिहासकार **'साल्टोर'** रामगुप्त का शासनकाल ई० सन् 375 से 380 तक मानते हैं। इतिहासकार चन्द्रगुप्त का सिंहासनासीन होना ई० सन् 380 मानते हैं जिसकी पुष्टि मथुरा के शिलालेख से भी होती है। अत: हम 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक का समय ई० सन् 380 मान सकते हैं।

राजनीतिक परिस्थितियाँ—ई० सन् 375 से 380 तक का राजनीतिक वातावरण कैसा था इसे प्रसाद जी ने 'ध्रुवस्वामिनी' में चित्रित करने का प्रयास किया है। उस समय रामगुप्त का शासन था, जो एक दुर्बल, कायर और अयोग्य शासक था। उसकी इन्हीं कमज़ोरियों से लाभ उठाते हुए शत्रु सिर उठाने लगे थे और रामगुप्त उनसे टक्कर लेने के स्थान पर उनसे सन्धि करना श्रेयस्कर समझता था। शकराज की सन्धि की शर्तें तो बहुत ही विचित्र थीं। वह अपने लिए महादेवी ध्रुवस्वामिनी और अपने सामन्तों के लिए रामगुप्त के सामन्तों की पत्नियाँ मांगता है, जिसे कायर, क्लीव और निर्लज्ज रामगुप्त स्वीकार कर लेता है किन्तु चन्द्रगुप्त अपने वंश की मर्यादा का हनन होते नहीं देख सकता वह स्त्री वेश में ध्रुवस्वामिनी के साथ शकराज के शिविर में जा कर उसका वध कर डालता है।

'ध्रुवस्वामिनी' के प्रथम अंक में रामगुप्त के अन्त:पुर का चित्रण करके यह सिद्ध किया है कि उस समय के राजा कितने विलासी होते थे। हर समय मदिरापान करते रहने से और स्त्रियों के संसर्ग में रहने के कारण उनका पौरुष समाप्त हो जाता है। ध्रुवस्वामिनी का यह व्यंग्य देखिए कितना सटीक है। जब कोई प्रतिहारी राजा के विषय में पूछता है तो वह कहती है—"मेरे आंचल में तो छिपे नहीं हैं। देखो ! किसी कुंज में ढूंढ़ो।"

उस युग की राजनीति में नैतिकता का अभाव था। सम्राट् समुद्रगुप्त अपना उत्तराधिकारी चन्द्रगुप्त को नियुक्त कर जाते हैं किन्तु रामगुप्त शिखर स्वामी के साथ षड्यन्त्र रच कर न केवल राजसत्ता हथिया लेता है अपितु अपने छोटे भाई की प्रेमिका अथवा वाग्दत्ता पत्नी से भी विवाह रचा लेता है।

रामगुप्त के युग में नारी को केवल भोग-विलास की वस्तु माना जाता था। इसी के फलस्वरूप जीतने वाले राजा को हारने वाला राजा अपनी कन्या भेंट कर देता था। यह उपहार उस समय की राजनीति का एक अंग था। स्वयं ध्रुवस्वामिनी इसी प्रकार चन्द्रगुप्त को भेंट की गई थी। शिखर स्वामी का निम्न कथन इसका प्रमाण है—"समुद्रगुप्त की विजय यात्रा में महादेवी जी के पिता जी ने उपहार में उन्हें गुप्तकुल में भेज दिया।" और रामगुप्त उससे विवाह करके भी उसे शकराज को भेंट कर देना चाहता है। ध्रुवस्वामिनी को रामगुप्त शकराज से सन्धि की शर्तों के अनुसार भेंट कर देना चाहता है। ध्रुवस्वामिनी के विरोध करने पर वह कहता है—"तुम मेरी रानी नहीं, नहीं। जाओ तुमको जाना पड़ेगा। तुम उपहार की वस्तु हो। आज मैं तुम्हें किसी दूसरे को देना चाहता हूँ। इससे तुम्हें क्यों आपत्ति है ?" नारी जाति का ऐसा घोर अपमान अन्यत्र देखने को नहीं मिलता किन्तु यह उस समय की राजनीति का एक अंग था।

षड्यन्त्र भी उस समय की राजनीति के अंग थे। पहले रामगुप्त षड्यन्त्र रच कर राज्य सिंहासन हथिया लेता है फिर ध्रुवस्वामिनी को किन्तु ध्रुवस्वामिनी के प्रति वह सदा आशंकित रहता है, उसे सन्देह रहता है कि ध्रुवस्वामिनी चन्द्रगुप्त से प्रेम करती है। इसी कारण वह चन्द्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी को शकराज के शिविर में जाने देता है, उसका अनुमान था कि शकराज इन दोनों की हत्या कर देगा और वह निःशंक हो जाएगा।

इस प्रकार की राजनीति कभी सफल सिद्ध नहीं हो सकती। प्रसाद जी ने 'ध्रुवस्वामिनी' में रामगुप्त का विनाश करके इस बात को सिद्ध कर दिया है। दूसरे अंक में आचार्य मिहिर देव इस प्रवंचनापूर्ण राजनीति से राजा को सावधान करते हुए कहता है—"राजनीति ! राजनीति ही मनुष्य के लिए सब कुछ नहीं है। राजनीति के पीछे नीति से भी हाथ न धो बैठो, जिसका विश्व मानव के साथ व्यापक सम्बन्ध है। राजनीति की साधारण घटनाओं से सफलता प्राप्त करके क्षण भर के लिए तुम अपने को चतुर समझने की भूल कर सकते हो।" ऐसी प्रवंचनापूर्ण राजनीति एक प्रकार का धोखा है जो इसमें फँसेगा उसका परिणाम रामगुप्त जैसा ही होगा।

सामाजिक परिस्थिति—रामगुप्त के शासन काल में सामाजिक पतन देखने को मिलता है। इसका एक कारण प्रसाद जी ने यह बताया है कि राजा यदि दुर्बल, विलासी, कायर और क्लीव होगा तो मानव समाज की सामाजिक दुर्दशा होगी ही। 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में समाज की इसी दुर्दशा पर प्रकाश डाला गया है।

प्रसाद जी ने इस काल में पुरुषों की अपेक्षा नारियों को अधिक सबल और सक्षम दिखाया है। दूसरा कारण उन्होंने यह दिया है कि उस समय के पुरुष विलासी, मद्यप और कायर थे। नाटक में हम देखते हैं कि मंदाकिनी सम्राट् रामगुप्त एवं शिखर स्वामी तक को काफ़ी डाँटती-फटकारती है।

उस समय के समाज में विलास के लिए मदिरा का काफ़ी प्रचार था और नारी केवल भोग-विलास की वस्तु समझी जाती थी। ध्रुवस्वामिनी का निम्न कथन इस बात का प्रमाण है—"मैं स्वीकार करती हूँ कि आज तक मैं तुम्हारे विलास की सहचरी न हुई.....।" रामगुप्त केवल इसी कारण उसका त्याग कर देता है। उसे पत्नी के अधिकार से वंचित रखता है।

उस समय का पुरुष एक से अधिक पत्नियाँ रख सकता था। रामगुप्त अति सुन्दर ध्रुवस्वामिनी के होते हुए भी कुंजों में पर-स्त्री गमन में रत रहता है। शकराज भी कोमा जैसी प्रेयसी के होते हुए ध्रुवस्वामिनी को पाने का प्रयत्न करता है।

नाटक में नृत्यादि के आयोजन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उस समय का समाज किस हद तक वासना में लीन था। बौनों और हिज़ड़ों का नृत्य एवं सम्भाषण उस काल के आमोद-प्रमोद के घटिया स्तर को स्पष्ट करता है और रामगुप्त जैसा राजा जब उनमें रुचि लेता है तो राज परिवार के भी घटियापन का हमें ज्ञान होता है।

उस समय के समाज में कन्योपहार की प्रथा थी जिसमें कन्या उपहार रूप में दे दी जाती थी। ध्रुवस्वामिनी भी गुप्त कुल में ऐसे ही आई थी और इसी प्रथा के प्रभाव के अन्तर्गत

शकराज भी ध्रुवस्वामिनी को उपहारस्वरूप पाना चाहते हैं। स्पष्ट है कि उस समय नारी को एक क्रीतदासी के सिवाय कुछ भी नहीं समझा जाता था।

उस समय की नारियों में जागरूकता के चिह्न भी दिखाई पड़ते हैं। ध्रुवस्वामिनी अपने पति रामगुप्त के मुँह पर ही उसे कायर, निर्लज्ज, मद्यप और नपुंसक तक कह देती है वह उससे तलाक पाना चाहती है। ऐसे पति के साथ कौन स्त्री रहना पसन्द करेगी किन्तु साथ ही प्रसाद जी ने कोमा के रूप में मूक होकर अत्याचार सहने वाली नारी को भी प्रस्तुत किया है। वह एक ऐसी सशक्त नारी है जो अपने पति की प्रताड़ना मिलने पर भी उसके दूसरी स्त्री को प्राप्त करने की नियत जान कर भी उससे सम्बन्ध नहीं तोड़ना चाहती। कोमा अपने पिता से कहती है, ''तोड़ डालूँ पिता जी ! मैंने जिसे अपने आँसुओं से सींचा वही दुलार भली वल्लरी मेरी आँख बन्द कर चलने में मेरे ही पैरों में उलझ गई। दे दूँ एक झटका— उसकी हरी-हरी पत्तियाँ कुचल जाएं और वह छिन्न-भिन्न होकर धूल में लौटने लगे। ऐसी कठोर आज्ञा न दो।''

'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में प्रसाद जी ने रामगुप्तकालीन समाज की दुर्दशा का चित्रण सफलतापूर्वक किया है। नारियों का दैन्य पुरुषों की स्त्रैण भावना और समाज की दुरावस्था सभी कुछ 'ध्रुवस्वामिनी' में देखने को मिलता है।

धार्मिक परिस्थिति— ध्रुवस्वामिनी नाटक पढ़कर हमें यह ज्ञात होता है कि गुप्त काल में धर्म के बन्धन इतने जटिल नहीं थे जितने कि उससे पूर्व काल में थे। उस काल में पत्नी को धार्मिक मर्यादा के अनुसार उपयुक्त पति न मिलने पर उसे त्याग देने की अनुमति थी। नारद और पराशर की स्मृतियां तथा कौटिल्य का अर्थशास्त्र इस सम्बन्ध में स्पष्ट निर्देश देते हैं। 'ध्रुवस्वामिनी' में पुरोहित अपना व्याख्यान इस प्रकार देता है। ''विवाह की विधि ने देवी ध्रुवस्वामिनी और रामगुप्त को एक भ्रान्तिपूर्ण बन्धन में बाँध दिया है। धर्म का उद्देश्य इस तरह पद दलित नहीं किया जा सकता। माता और पिता के प्रमाण के कारण से धर्म विवाह केवल परस्पर द्वेष से टूट नहीं सकते परन्तु यह सम्बन्ध उन प्रमाणों से भी विहीन है। और भी (रामगुप्त को देख कर) यह रामगुप्त मृत और प्रव्रजित तो नहीं, पर गौरव से नष्ट, आचरण से पतित और कर्मों से भी राज किल्विषी और क्लीव हैं। ऐसी अवस्था में रामगुप्त का ध्रुवस्वामिनी पर कोई अधिकार नहीं।'' अपना निर्णय देता हुआ पुरोहित आगे कहता है, ''जिसे अपनी स्त्री को दूसरे की अंकगामिनी बनाने के लिए भेजने में कोई संकोच नहीं, वह क्लीव नहीं तो और क्या है ? मैं स्पष्ट कहता हूँ कि धर्म शास्त्र रामगुप्त से ध्रुवस्वामिनी के मोक्ष (तलाक) की आज्ञा देता है।

प्रसाद जी ने तत्कालीन ब्राह्मणों को निर्भीक और साहसी दिखाया है। जब रामगुप्त पुरोहित से कहता है ''कि मूर्ख, तुम को मृत्यु का भय नहीं।'' तो पुरोहित बड़ी आस्था से उत्तर देता है, ''तनिक भी नहीं। ब्राह्मण केवल धर्म से भयभीत है, अन्य किसी भी शक्ति को वह तुच्छ समझता है। तुम्हारे वधिक मुझे धार्मिक सत्य कहने से रोक नहीं सकते। उन्हें बुलाओ मैं तैयार हूँ।'' इससे स्पष्ट होता है कि धर्म की व्यवस्था दृढ़ थी। जिसके कारण पुरोहित एवं पंडित निर्भीक एवं स्पष्टवादी थे।

इस विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि देशकाल एवं वातावरण की दृष्टि से 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक एक सफल नाटक है। उसमें देशकाल एवं वातावरण का सही चित्रण किया गया है। तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों का निश्चय ही सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया गया है।